International Journal of Applied Research 2020; 6(5): 457-461

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2020; 6(5): 457-461
www.allresearchjournal.com
Received: 19-02-2020
Accepted: 28-03-2020

उमेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, स्वामी श्रद्धानन्द कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
उमेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, स्वामी श्रद्धानन्द कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

नगर का उद्भव और विकास

उमेश कुमार

प्रस्तावना

देश या समाज में पाए जाने वाले आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक स्वरूप को समझने में नगरों का अध्ययन हमें काफी सहायता करता है। अंग्रेज शासन काल के अधिकांश इतिहासकारों ने राजा, रानी, मंत्री, जमींदार आदि ऊंचे वर्गों के लोगों एवं एक राजा से दूसरे राजा के बीच की लड़ाई को इतने विशाल स्वरूप में बताने का प्रयास किया है कि इतिहास का निर्माण का मुख्य आधार जैसे– किसान, व्यापारी, कर्मचारी, शिल्पकार, शूद्र विद्यार्थी, गरीब मजदूर, आदि की स्थिति इन राजाओं के भार से दब कर रह गई। लगभग 1960 के बाद भारतीय इतिहासकारों का एक समूह इस बात को ढंग से बताने का प्रयास करने लगा कि मात्र राजा–रानी और युद्ध ही इतिहास नहीं बनाते। इतिहास बनाते हैं गरीब, मजदूर, किसान, शिल्पकार, व्यापारी, सेना में काम करने वाला एवं अपने राज्य को दुश्मनों से बचाने के लिए जान की बाजी लगा देने वाला युवा सिपाही। समाज को यही वर्ग राजा–रानी को पैदा करता हे न कि राजा से प्रजा का जन्म होता है। वैसे भारतीय धार्मिक ग्रन्थ राजा का अर्थ पिता, ईश्वर, मालिक और प्रजा का अर्थ पुत्र बताते हैं। यह बात धर्म के धरातल पर ही सत्य हो सकती है। वास्तविक धरातल पर तो हम पाते हैं कि प्रजा ही पिता है। यही कर के रूप में राजा को अपने उत्पादन का एक भाग नगद या वस्तु के रूप में देती है जिससे राजा का भरण–पोषण करने में समर्थ हो पाता है। डी.डी. कोसाम्बी का कहना है कि यदि प्रमुख महत्वाकांक्षी लोगों के नामों और बड़ी–बड़ी लड़ाईयों की सूची ही इतिहास है तो यह अर्थ गलत होगा किन्तु यदि यह जानना अधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाए कि उसके पास हल था या नहीं तो भी भारतीय इतिहास को समझने में अधिक सुविधा होगी। जहां तक नगरों के निर्माण में असल महत्व हल और चक्का का है जिसने आम आदमी को प्रभावित किया और अतिरेक की ओर उत्पादक वर्ग निर्देशित हुआ। जहां तक नगरों के निर्माण का प्रश्न है, इस पर दो प्रमुख विचार इतिहासकारों के बीच पाए जाते हैं। गिडेन जोबर्ग का कहना है कि विश्व के प्राचीन नगरों का जन्म मुख्य रूप से वैसे ही स्थानों में सबसे पहले हुआ जहां की जलवायु एवं मिट्टी पौधों एवं जानवरों की जिन्दगी की सुरक्षा के लिए अनुकूल थी। इन्हीं पौधों एवं जानवरों के कारण बड़े पैमाने पर लोग एक जगह इकट्ठा हो सके। इतना ही नहीं, शिल्पकला निर्माण की जानकारी रखने के बावजूद लोग वैसे ही स्थानों पर मु1ख्य रूप से बसने लगे जो पौधों एवं जानवरों के लिए अनुकूल वातावरण वाले हों, भले ही वह स्थान काफी छोटा क्यों न हो। इसी अनुकूल वातावरण से आगे चलकर शिल्पकला को विकसित किया गया और भोजन की आपूर्ति होने के कारण शिल्पकारों ने ऐसे ही स्थानों को पसन्द किया। जीवन धारण के लिए जिस तरह पौधे एवं जानवरों की आवश्यकता महसूस की गई उसी तरह वैसे स्थानों को ज्यादा पसंद किया गया जहां जल की पूर्ति भी आसानी से हो सके क्योंकि जल भी नगरों के निर्माण के लिए आवश्यक तत्व था। नगर–जीवन के लिए दूसरी मौलि आवश्यकता एक विकसित शिल्प–कला निर्माण को मानता है जिसका महत्व उसके अनुसार कृषि उत्पादन एवं अन्य उत्पादन के लिए काफी है। कृषि उपकरणों की विकास की आवश्यकता केवल इसलिए नहीं पड़ी कि जोतने के लिए औजार चाहिए बल्कि इसलिए भी कि काफी फसल लग सकें तथा काफी अन्न प्राप्त हो सके। इसके लिए भी कृषि के नए उपकरणों की आवश्यकता पड़ी। ऐसा इलिए जरूरी था कि एक निश्चित मात्रा में खाद्य पदार्थ आवश्यकता से अधिक या अतिरेक के रूप में पैदा हो सकें क्योंकि नगरों में रह रहे लोग तो शिल्पकला विज्ञान में व्यस्त थे, अतः अन्न नहीं पैदा करते थे। जब अन्न–उत्पादक अतिरेक पैदा करेगा तभी तो कुछ लोग खाद्य–पदार्थ पैदा करने से मुक्त हो सकते हैं और ये लोग जहां पर रहकर शिल्पकला, विज्ञान एवं कए–दूसरे से मदद लेकर कच्चे सामान से तैयार माल बनागंगे वहां, नगरों का जन्म होगा। खाद्य पदार्थ में न केवल खेतों से उत्पन्न वस्तुएं ही थीं बल्कि शिकार द्वारा जानवरों का मारना एवं मछली मारने का काम भी उत्पादक वर्ग के ही हाथों में था जो प्रायः नगर निवासियों को इसका भी अतिरेक देते थे। जो वर्ग के अनुसार प्राचीन शहरों के निर्माण में

तीसरी चीज महत्त्वपूर्ण प्राक–स्थिति राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्र में विकसित सामाजिक संगठन का होना भी है। नगरीय जीवन के प्रारम्भ में ही आर्थिक व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जिसमें नगर का तैयार माल आसपास के समुदायों या दूर के समुदायों में वितरित किया जा सके। इससे भी पहले यह आवश्यक है कि खेती से उत्पन्न अतिरेक अतिसुविधापूर्वक अन्य आबादी में पहुंचाया जा सके। इसके अलावा अनेक पेशेवर कार्य जिसमें कुछ विशेष ज्ञान एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता हो जैसे खान से धातु निकालना, यातायात एवं खनिज मात्रा को साफ करने की विधि ये सारे काम एक–दूसरे से जुड़े हुए भी सुचारू एवं व्यवस्थित रूप से हो सकें। इस तरह एक शासक वर्ग की आवश्यकता पड़ती है जो नियमित रूप से इन कार्यकलापों को चलाने में एक विशेष नियम के अनुसार शासन करे ताकि अतिरेक की उपलब्धि व्यवस्थित ढंग से हो सके तथा सामाजिक शक्ति एवं कार्यकुशलता का प्रसार हो जिससे नगरों का विकास हो सके। जोबर्ग के नगरीकरण के इस सिद्धान्त के अनुसार सामाजिक शक्ति का प्रभुत्व आर्थिक वातावरण पर होता है। उसका मानना है ठीक से बनाए रखने के लिए सबसे पहले सामाजिक स्थायित्व (Social stability) आवश्यक है। जोबर्ग यह तर्क देता है कि प्राचीनतम शहरों के निर्माण में एक राजनीतिक स्वरूप या बनावट की उपस्थिति आवश्यक है। यह राजनीतिक स्वरूप नगर में हो रहे पेशों से वसूले गए कर एवं आसपास के गांवों में रह रहे किसानों से अतिरेक के रूप में जो अन्न प्राप्त करेगा उसी से शहर में रह रहे अनुत्पादक वर्ग के भरण–पोषण करने के लिए खाद्य सामग्रियां मिलेंगी।

दी अरबन रिवॉल्युशन नामक अपने लेख एवं अपनी पुस्तक प्रोग्रेस एंड आर्क्योलॉजी लन्दन, में गॉर्डन चाइल्ड बताते हैं कि शहर के आकार–प्रकार सरकारी काम, आदि के लिए लेखन–पद्धति बहुत आवश्यक था। उनका कहना है कि लेखन क्रिया के आधार पर ही नगर में एक ऊंचे दर्जे के लोगों, (जो खेती का काम नहीं करते हो एवं नगर में अलग–अलग पेशे के विशेषज्ञ हों तथा शिल्प, विज्ञान, कला को विकसित करने की क्षमता रखते हों), का रहना सम्भव हैं सारे तत्वों के ऊपर वे लेखन पद्धति को ही एक ऐसा बिन्दु मानते हैं जिसके आधार पर नगर एवं गांवों में अन्तर किया जा सकता है। गार्डन चाइल्ड महोदय का यह विचार पूर्ण रूप से स्वीकारते हुए जोबर्ग का कहना है कि लेखन–क्रिया की उपस्थिति का अर्थ है शिक्षिरत समुदाय की उपस्थिति, जो शिक्षा के आवश्यक सिद्धान्तों को नगरीय वातावरण में फैलाता है और इसके आधार पर एक ऐसे राजनीतिक औजार का निर्माण होता है जो नगरीय जीवन को सुचारू रूप से चलाने में प्राथमिक रूप से महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। इसी लेखन–पद्धति के आधार पर व्यापारियों, शिल्पकारों एवं अन्य कर्मचारियों को आवश्यकतानुसार वस्तुएं एवं नई वस्तुओं के उत्पादन के लिए उचित सहायता मिल पाती है।

दी सिटी इन हिस्ट्री, (1651) न्यूयार्क के लेखक लेवीस मॉशर्ड नगरों की उत्पत्ति पर प्रकाश डालते हुए बताते हैं कि विकेन्द्रित ग्रामीण अर्थव्यवस्था को ऊंचे दर्जे की एक संगठित नगरीय अर्थव्यवस्था में परिवर्तन करने का सबसे प्रमुख्या प्रतिनिधि राजा या शासक वर्ग होता है। नगरीय प्रसार में राजा को ध्रुव के समान एक चुम्बकीय शक्ति के रूप में वे मानते हैं कि जो शहर रूपी मानव के शरीर का दिल होता है एवं सभ्यता की नई शक्तियों के विकास पर उसी का नियन्त्रण रहता हैं सिटी इन अर्ली हिस्टोरिकल इंडिया, शिमला (1973) के लेखक आमलान्द घोष (प्रथम भारतीय इतिहासकार जिन्होंने भारतीय इतिहास का अध्ययन नगरों के उदय, विकास एवं पतन के आधार पर किया है) ने भी उपर्युक्त तथ्यों को स्वीकार है। उपर्युक्त तथ्यों को पूर्ण रूप से स्वीकारते हुए जोबर्ग का कहना है कि इसमें कोई दो मत नहीं कि आर्थिक कारण से ज्यादा महत्त्वपूर्ण राजनीतिक कारण है जिसकी मदद से ही नगर केन्द्रों का जन्म हो सका। यद्यपि जोबर्ग इस बात से इनकार नहीं करते हैं कि राजनीतिक कारण को नगर के उदय के लिए मौलिक कारण मानते हैं।

लन्दन का एक विद्वान ब्रुश ट्रिगर ने अपने एक लेख डिटरमिनेंट्स ऑफ अरबन ग्रोथ इन प्री इंडस्ट्रियल सोसायटी में गीडेन जोबर्ग के उपर्युक्त विचारों को बहुत ढंग से काटते हुए बताया है कि गीडेन जोबर्ग लेखन क्रिया और नगरीयकरण को इतना ज्यादा एक–दूसरे से सम्बद्ध बताते हैं कि ऐसा लगता है कि लेखन क्रिया के अलावा नगर उदय के लिए कोई दूसरा तत्व अतिआवश्यक है ही नहीं। गीडेन जोबर्ग के मत से ऐसा लगता है कि नगर वहीं पर है जहां शिक्षित संस्कृति है, जहां लेखन नहीं है, वहाँ नगर में हम पाते हैं कि शैक्षणिक केन्द्र होने के बावजूद नालन्दा या विक्रमशिला भारत के सबसे प्रमुख शहर कभी नहीं रहे। गीडेन जोबर्ग द्वारा नगर के उदय के लिए राजा की प्रमुखता को काटते हुए ट्रिगर कहता है कि बहुत सी आवश्यकताओं में से नगर के लिए एक आवश्यक तत्व राजा हो सकता है, न कि केवल राजा या राजा की शक्ति से ही नगर का निर्माण। फिर हम देखते हैं कि जोबर्ग नगर के महत्त्व एवं लम्बी जिन्दगी के लिए शिल्पकला, विज्ञान एवं व्यापारिक चहल–पहल को महत्व देता है; लेकिन स्पष्ट रूप से शिल्प, विज्ञान, कला एवं व्यापारिक तत्वों के महत्व की नगरों के उदय के लिए मानने से इन्कार कर देता है। ऐसा लगता है कि यह इस बात को बिल्कुल नहीं समझ पाता है कि शिल्प, विज्ञान, कला एवं आर्थिक विकास ने ही मानव को एक समुदाय का रूप दिया और एक साथ मिलकर जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति में एक–दूसरे की मदद करने या व्यक्तिगत जीवन व्यतीत करने का पाठ पढ़ाया। इस तरह नगर के उदय का पहला बीज शिल्प, विज्ञान, कला एवं व्यापारिक आवश्यकता एवं उत्थान के ही कारण हुआ इन्हीं तत्वों के कारण एक क्षेत्र में स्थित कई गांवों में से कोई एक गांव नगर के रूप में बदला जहां कुछ विशेष प्रकार के लोग जो शिल्प, कला, विज्ञान एवं व्यापार से किसी–न–किसी तरह जुड़े थे, आकर रहने लगे और एक साथ मिलकर एक सुचारू जिन्दगी बिताने लगे और यही वह विकसित सामाजिक स्थिति थी जब लोगों ने प्रशासन की आवश्यकता महसूस की। सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्थित स्थिति के अभाव में प्रशासन मात्र उसी स्थिति में आवश्यक समझा जाता है जब समाज की बनावट आर्थिक एवं शिल्प, विज्ञान, कला में उन्नति होने के कारण काफी बड़ी हो जाए। इसी स्थिति में समाज इस बात की आवश्यकता महसूस करता है कि धन एवं जन की सुरक्षा के लिए तथा सामाजिक संबंध को अच्छज्ञ बनाने के लिए राजनीतिक संगठन की आवश्यकता पड़ती है। इन तथ्यों से यह प्रमाणित होता है कि शिल्पकला, विज्ञान, आर्थिक एवं सामाजिक विकास के बाद ही राजनीतिक साधन की आवश्यकता पड़ती है, न कि राजनीतिक साधन से प्रारम्भिक अर्थ एवं शिल्प, विज्ञान, कला का जन्म होता है। नगर की उत्पत्ति के उपर्युक्त कारणों एवं विभिन विद्वानों के मतों एवं विचारों के अध्ययन से हमें इतिहास में नगरीय विषयों के प्रारम्भिक विकास को जानने में सुविधा मिलती है।

भारत में शहरीकरण की शुरूआत सिन्धुघाटी में पाए गए नगरों से आरम्भ होती है। सिन्धुकाल की नगरीय अवस्था के पतन के पश्चात ऋग्वैदिक एवं वैदिक काल में अर्थात् ईसा पूर्व छठी शताब्दी के पहले हमें नगरों के प्रमाण नहीं के बराबर देखने को मिलते हैं। खुदाई से प्राप्त सिक्के, लिखित सामग्री एवं अन्य पुरातात्विक सामग्रियों अध्ययन से पता चलता है कि लगभग 500 ई.पू. से भारत की आर्थिक व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आने लगे। इसके परिणामस्वरूप नगरों का प्रादुर्भाव होने लगा। गंगा के किनारे उपजाऊ प्रदेश के कारण श्रावस्ती, चम्पा, राजगृह, अयोध्या, कोशाम्बी और काशी जेसे कुछ नगर बहुत महत्त्वपूर्ण बन गए। आवश्यकता से अधिक उत्पादन के कारण कुछ अन्य नगर भी विकसित हुए। नगरों का जन्म वैसे हुआ जहां आरम्भ में कुम्हारगीरी, बढ़ईगीरी, वस्त्रों की बुनाई जैसे शिल्पों में विशिष्टता

प्राप्त करने वाले ग्राम ज्यादा पाए गए। जैनधर्म ग्रन्थों में कई प्रकार के नगरों की चर्चा हमें देखने को मिलती है, जैसे–अवारीत नगर, मिट्टी की चहारदीवारीवाला नगर, छोटी दीवारवाला नगर, बड़ानगर, समुद्रनगर और राजधानी नगर। दक्षिण के कुछ शहरों के लिए पुर, स्कन्धावार, विजय–स्कन्धावार, नगर, महानगर, सार्वभौम (महानगर से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण नगर) पट्टन, महापट्टन, आदि की चर्चा अभिलेखों एवं लिखित स्रोतों में मिलती है।

नगर का विकास

प्राचीन काल के नगरों के विकास में मुख्य रूप से तीन आधार हमें देखने को मिलते हैं–आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक। छठी शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर कुषाण एवं सातवाहन काल तक के नगरों के अध्ययन से हम पाते हैं कि इस काल मं कुछ अपवादों को छोड़कर मुख्य रूप से आर्थिक एवं राजनीतिक कारणों का ही हाथ नगरों के विकास में रहा। धार्मिक प्रधानता वाले शहरों की संख्या इस काल में नगण्य है। खुदाई से प्राप्त सिक्के, लिखि सामग्री एवं अन्य पुरातात्विक सामग्री के अध्ययन से पता चलता है कि छठी शताब्दी ईसा पूर्व में भारत की आर्थिक व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन का आधार था लोहे का व्यापक उपयोग (भारत में लोहे का उपयोग 800 ईसा पूर्व से पाया जाता है)। धान, ईख और कपास की बड़े पैमाने पर खेती तथा शिल्प विज्ञान में काफी उन्नति होने लगी। परिणामस्वरूप आवश्यकता से अधिक उत्पादन ईसा काल की मुख्य विशेषता थी। इस काल में लगभग 60 सुविख्यात नगरों की चर्चा तट में भृगुकच्छ तक और दक्षिण में कावेरी–पट्टनम से लेकर उत्तर में कपिलवस्तु तक फैले हुए थे। श्रावस्ती जैसे बड़े नगरों की संख्या 20 थी। इनमें से छह नगर तो इतने महत्त्वपूर्ण थे कि वहां बुद्ध ने पर्यटन भी किया था। ये छह नगर थे–चम्पा, राजगृह, साकेत, कोशाम्बी, वाराणसी और कुशीनगर। वस्तुतः नगर का महत्त्व उसकी कला एवं शिल्प से होता था। राजगृह क बारे में उस काल के ग्रन्थों में चर्चा है कि वहां अट्ठारह शिल्पी संघ थे। बौद्धग्रन्थ में वर्णित इन परम्परागत अट्ठारह शिल्पी संघों में से केवल चार का ही उल्लेख है बढ़ई, लौहकार, चर्मकार और चित्रकार। हमें यह ठीक–ठीक ज्ञात नहीं कि नगर और गांवों के बीच कैसा संबंध था। उत्पादन के अच्छे साधनों के कारण ग्राम सात प्रकार के अन्न और सात प्रकार के दलहन पैदा करते थे और अतिरिक्त खाद्य सामग्री नगर में भारी संख्या में रहने वाले शिल्पियों, वणिकों और सैनिकों के लिए तथा राजा और उसके सामन्तों को डयोढ़ियों के लिए आपूर्ति करते थे। अतिरिक्त अनाज के बदले जनप के लोग नगरों से शायद वस्त्र पाते थे क्योंकि कहते हैं कि वाराणसी के आसपास रूई उपजाई जाती थी जिसमें वस्त्र बुना जाता था।

1. इतिहास के विभिन्न स्रोतों एवं घटनाओं के अध्ययन से पता चलता है कि नगरों का उत्थान विस्तृत रूप से अनेक कारणों के परिणामस्वचरूप हुआ। इनमें से सबसे प्रमुख कारण था अतिरेक अर्थात् आवश्यकता से अधिक उत्पादन और उसके वितरण के लिए व्यापार एवं व्यापारियों का क्रिया–कलाप। धार्मिक कारण के समान ही प्रशासक वर्ग का भी हाथ शहरों के उत्थान में रहा। व्यापारिक, प्रशासनिक, शैक्षणिक, धार्मिक आदि जो भी नगरों की चर्चा हमें देखने को मिलता है वे मात्र एक ही प्रकार के क्रिया–कलाप के केन्द्र न थे बल्कि अन्य प्रकार की विशेषताएं भी यहां पाई जाती थी। इन शहरों की आबादी अलग–अलग क्रिया–कलापों पर निर्भर करती थी, जैसे व्यापारिक नगरों की आबादी धार्मिक या प्रशासनिक केन्द्रों की तुलना में सम्भवतः अधिक होती थी। शहरों के विकास के जिन मुख्य कारणों का अध्ययन आवश्यक है, वे हैं अधिक मात्रा में खाद्य पदार्थों की आपूर्ति, जनसंख्या में वृद्धि एवं ग्रामीण बेकारी, हस्तकला एवं कारीगरी में विशिष्टता, खरीद एवं बिक्री, सामाजिक विकेन्द्रीकरण, धर्म, धार्मिक यात्रा, शिक्षा, भूस्वामित्व, किराएदार, प्रशासन, सुरक्षा, युद्ध, सिंचाई, भौगोलिक वातावरण, व्यक्तिगत प्रयास आदि।
2. जहां तक अधिक मात्रा में खाद्य पदार्थ के उत्पादन का प्रश्न है, हम पाते हैं कि अधिक उत्पादन एवं नगरीय क्षेत्रों में उसका पहुंच पाना शहरों के उत्पादन का मुख्य आधार था। अपवाद वर्ग मुख्य रूप से शहरों के आसपास स्थित गांवों में रहता था। अपवाद के रूप में उत्पादक वर्ग का एक छोटा–सा वर्ग शहरों में भी रहता था। उत्पादक वर्ग से शहर खाद्य सामग्री एवं कच्चा माल जैसे अन्न, कपास, आदि खरीदता था और बदले में शहर में निर्मित तैयार माल, जैसे कपड़ा आदि गांवों में बेचा जाता था। इसी खरीद एवं बिक्री के आधार पर बहुत से शहरों का जन्म हुआ।
   जनसंख्या की वृद्धि एवं अकाल, महामारी, सूखा आदि के कारण ग्रामीण बेकारी का भी हाथ शहर के विकास में रहा। नौकरी की तलाश में आए हुए लोगों के कारण शहरों की आबादी बढ़ती गई। फलतः शहरों के उत्पादन में वृद्धि हुई और शहरों के क्षेत्रफल में विस्तार भी होने लगा। आबादी बढ़ने के साथ–साथ तकनीकी विज्ञान में प्रगति की आवश्यकता महसूस की गई और तब नई–नई वस्तुएं अधिक मात्रा में निर्मित होने लगीं।
   नगरीय अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार व्यापार एवं हस्तकला के माध्यम से निर्मित वस्तुएं थीं। विकसित व्यापार के कारण ही हस्तकला के आधार पर निर्मित अधिक–से–अधिक वस्तुओं की आवश्यकता होती थी। नगरों में प्रायः हस्तकला विशेषज्ञ जैसे स्वर्णकार, कसेरा, कुम्हार आदि रहते थे और कई शिल्पकार एक साथ मिलकर आभूषण, बर्तन आदि वस्तुओं का निर्माण करते थे। इस तरह एक साथ मिलकर नियमबद्ध तरीके से निर्मित होने वाले सामान का केन्द्र नगर के रूप में विकसित हो जाता था। अपने स्वार्थ की रक्षा के लिए व्यापारियों एवं शिल्पकारों में एकता आने लगी और इनके बीच अनेक व्यापारिक समूहों का विकास होने लगा।
3. शहरों के विकास में व्यापार एवं बाजार का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान रहा। नगरीय आर्थिक स्थिति का मुख्य आधार व्यापार ही था। निर्मित वस्तुओं के वितरण के एक निश्चित नियम का विकास होने लगा। वैसे, शहरों का गांवों के साथ व्यापार का क्षेत्र काफी सीमित था। एक स्थान का दूसरे स्थान के साथ व्यापार होने के सिलसिले में बीच–बीच में कुछ ऐसे सुरक्षित स्थानों का भी जन्म होने लगा जहां व्यापारी अपना सामान रखकर वर्षा या अन्य संकटकालीन स्थिति में कुछ दिनों तक आराम करने के दृष्टिकोण से ठहरा करते थे। ठहरने वाला यह स्थान बाद में चलकर शहर का रूप लेता था। दूर–दूर पर बसे हुए शहरों के बीच भी व्यापार होता था। विदेशों से भी भारतीय नगरों के व्यापारिक संबंध थे। मिश्र एवं मेसोपोटामिया से व्यापारिक संबंध होने के कारण भारत में नए–नए शहरों का विकास हुआ। शहरों में तैयार माल के उत्पादन और वितरण के आधार पर हम पाते हैं कि बहुत से शिल्पियों एवं कारीगरों का व्यापारिक संबंध न केवल राजदरबार से बल्कि मन्दिर एवं सेना से भी था। ये कारीगर, कपड़ा, गहना, लड़ाई के औजार, खाद्य–सामग्री आदि पहुंचाते थे। वितरण की इस प्रथा ने उत्पादक वर्ग एवं वितरकों के बीच संगठन को दृढ़ किया। फलतः बहुत से गोदामों, यातायात के साधन, लेखा–जोखा रखने वाले शहरी लोगों का एक नया वर्ग विकसित हुआ जो भिन्न–भिन्न कार्यों के विशेषज्ञ होते थे। उद्योग एवं व्यापार में विकास के कारण नए–नए शहरी वर्गों का भी विकास हुआ। इससे मुख्य रूप से दो नए वर्गों का विकास हुआ जिनमें से एक का संबंध उत्पादन से था और दूसरा वर्ग इन वस्तुओं को थोक भाव से कम कीमत पर

खरीद लेता था और उस पर मुनाफा रखकर राजदरबार, मन्दिरों एवं सेनाओं आदि को बेचता था। इस प्रक्रिया में अत्यन्त धनी, कम धनी, मध्यम वर्ग एवं गरीब वर्गों का विकास हुआ और इनके जीवन स्तर में भी आर्थिक, प्रशासनिक एवं नगर–योजना के दृष्टिकोण से अलग–अलग विशेषताएं पाई जाने लगीं।

4. धार्मिक कारण से भी शहरों का विकास हुआ। बहुत से गांवों में भी अनेक प्रकार के धार्मिक केन्द्र थे लेकिन वे बड़े पैमाने पर विकसित नहीं थे। जिस गांव में बड़े पैमाने पर धार्मिक क्रियाकलाप के लिए शहरी व्यक्तियों का समर्थन आवश्यक था। धर्मस्थलों के मन्दिरों में ब्राह्मण, क्लर्क, शिल्पकार, गानेवाला, बजानेवाला, नाचने वाली, नौकर, दासी आदि रहते थे। ये लोग मन्दिरों से सम्बन्धित सभी तरह के धार्मिक एवं आर्थिक कामों में संलग्न थे। अपनी आवश्यकता के सामानों की पूर्ति कुछ तो ये स्वयं करते थे लेकिन अधिक मात्रा में इन्हें शहरों से खरीदना पड़ता था।

   धार्मिक यात्री जो दूर–दूर से मन्दिर में पूजा–पाठ या दर्शन के लिए आते थे, बड़ी मात्रा में मन्दिरों को दान देते थे। इससे न केवल मन्दिरों को आर्थिक लाभ होता था बल्कि यातायात के साधनों का भी विकास हुआ और ये धार्मिक यात्री जो शहर के आसपास या दूर के गांवों से आते थे अनेक नए रास्तों का निर्माण किया करते थे। कुशीनगर, कपिलवस्तु, सारनाथ, श्रावस्ती, वैशाली आदि शहर उसी के परिणाम थे। मथुरा को भी इस श्रेणी में रखा जा सकता है। इन नगरीय स्थलों ने अनेक प्रकार के धार्मिक विचारों का विकास किया। भिन्न–भिन्न क्षेत्रों से आए यात्री अनेक प्रकार के धार्मिक विचारों से प्रभावित होकर गांव में इन धर्मों का बड़े पैमाने पर प्रचार एवं प्रसार करते रहते थे। इतना ही नहीं, गांव से आने वाले इन धार्मिक यात्रियों को शहरों से अनेक प्रकार के अनुभव प्राप्त हुए जिसके परिणामस्वरूप उनका मानसिक विकास हुआ।

   धार्मिक यात्रा के परिणामस्वरूप ही शहर और गांवों के बीच धर्मशाला या सरायों या ठहरने के स्थानों का निर्माण हुआ जो गांव या शहर में रहने वाले लोगों के द्वारा चन्दा इकट्ठा करके बनवाए गए या जिन्हें प्रशासन ने बनवाया। बहुत सी सरायों का निर्माण तो अनेक प्रकार की धार्मिक संस्थाओं ने भी किया। व्यापारियों के द्वारा भी इनके निर्माण में काफी मदद की गई। ये धार्मिक सरायें प्रायः मुख्य सड़कों पर शहरों के नजदीक निर्मित की जाती थीं। बाद में चलकर इन सरायों में व्यापारियों एवं यात्रियों के ठहरने के कारण बहुत तरह की दुकाने खुल गई। कुछ शिल्पकार भी यहां रहने लगे जो अपने सामान को नए–नए यात्रियों के हाथ बेंचा करते थे। इस तरह धीरे–धीरे स्थायी रूप से बसने वाले लोगों की संख्या बढ़ने लगी और एक प्रशासनिक संगठन का निर्माण आवश्यक हो गया। धीरे–धीरे नगरीय विशेषताएं यहां विकसित हुई। उदाहरण के लिए आधुनिक छपरा के पास चिरोंड नामक शहर को ले सकते हैं।

5. शिक्षा के कारण भी नगरों का निर्माण हुआ। बड़े–बड़े शैक्षणिक केन्द्र असंख्य विद्यार्थियों एवं शिक्षकों (जो खाद्य उत्पादन का कार्य नहीं करते थे) के रहने के कारण छोटे–छोटे शहरों के रूप में परिणत हो गए। इस श्रेणी में हम तक्षशिला एवं काशी को रख सकते हैं जहां राजपरिवार के भी लड़के पढ़ने आते थे। सारनाथ भी बौद्ध विद्या का एक केन्द्र था। नालन्दा और विक्रमशिला को इस श्रेणी में रखा जा सकता है।

6. बड़े–बड़े भूमिपतियों ने शहर के विकास में मदद की। काफी धनी होने के कारण इन लोगों ने आरामदायक जिन्दगी बिताने के लिए शहरों में रहना शुरू किया। शहर में ही रहकर ये लोग गांव की आर्थिक व्यवस्था का संचालन करते थे। अपने खेतों में प्रत्यक्ष रूप से काम न करके ये मजदूरों से काम करवाते थे। इस तरह भूमिपतियों के जाने से छोटे–छोटे शहरों का भी रूप विस्तृत होने लगा।

   शहरों में रह रहे लोगों की भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण से सेवा करने के लिए अनेक तरह के सेवकों जैसे माली, हजाम आदि की जरूरत पड़ी और इस तरह शहरी लोगों की संख्या बढ़ने लगी। रसोइया, घरेलू नौकर, व्यक्तिगत नौकर, गाने वाला आदि लोग शहर में पाए जाने लगे। ऐसे लोग अधिकांश संख्या में बड़े–बड़े नगरों, प्रशासनिक केन्द्रों एवं राजधानियों में रहते थे।

7. प्रशासनिक आवश्यकताओं के कारण शहरों का विकास हुआ। सामान्य तौर पर हम पाते हैं कि प्रशासनिक आवश्कताओं के साथ–साथ ही शहरों का विकास आरम्भ हुआ। यह ठीक है कि शहरों के विकास में सबसे प्रमुख तत्त्व आर्थिक होता, लेकिन हम यह भी पाते हैं कि जब से प्रशासनिक व्यवस्था की आवश्यकता महसूस की जाने लगती है, शहरों का विकास होने लगता है। छठी शताब्दी ई.पू. में तो हम कई वैसे ही शहरों को पाते हैं जो मुख्य रूप से प्रशासनिक केन्द्र होते थे।

   सुरक्षा की व्यवस्था ने नगरों के विकास में हाथ बंटाया। क्षेत्रीय सुरक्षा के लिए जब एक निश्चित स्थान पर काफी संख्या में सैनिक, लड़ाई के औजार एवं अन्य सुरक्षात्मक उपकरण रखे गए तथा उनकी देखभाल के लिए अधिकारियों की नियुक्ति की गई तो बाद में चलकर ऐसे स्थान शहर के रूप में परिणत हो गए।

   युद्ध के कारण नए–नए शहर बने। युद्ध से सुरक्षा के लिए बड़े–बड़े स्थानों पर चहारदीवारी और मजबूत किले बनाए गए तथा वहां पर बहुत से सैनिकों, अधिकारियों एवं राजाओं के आवास निर्मित हुए। बाद में ऐसे स्थान भी जिन्हें स्कन्धावार भी कहा जाता है, शहर के रूप में बदल गए।

   जिन क्षेत्रों में सिंचाई व्यवस्था अच्छे तरीके से की गई, वहां आवश्यकता से अधिक खाद्य सामग्री एवं कच्चे सामान पैदा किए गए। आवयकता से अधिक सामानों की बिक्री के लिए बहुत से गांवों में से किसी एक गांव को बहुत तरह की सुविधाओं को ध्यान में रखकर खरीद–बिक्री के केन्द्र के रूप में जब उसे स्थापित किया गया तो बाद में चलकर वह स्थान शहर के रूप में परिणत हो गया।

   भौगोलिक दृष्टिकोण से जिन क्षेत्रों की भूमि काफी उपजाऊ रही एवं वर्षा सन्तोषप्रद रही और बाढ़ तथा सूखा से क्षति की सम्भावना नहीं रही वैसे क्षेत्रों में व्यापारिक एवं राजनीतिक नगरों का विकास तेजी से हुआ। व्यक्तिगत प्रयासों से भी नगरों का विकास हुआ। सिकन्दर ने अपने नाम पर शहर बसाया। कनिष्कपुर एवं हुष्कपुर नामक शहरों के निर्माता कुषाण राजा कनिष्क एवं हुविश्क थे।

संदर्भ सूची

1. Bhattacharya P. Urbanization in Developing Countries. Economic and Political Weekly 2002;12:4219-4228.
2. Kundu A. Globalising Gurarat: Urbanisation, Employment and Poverty. Economic and Political Weekly 2000;2:3173-3181.
3. Ministry of Rural Development. Water Harvesting and Artificial Recharge: Technical Document 2004.
4. भारत के प्राचीन नगरों का पतन, राजकमल प्रकाशन।
5. Singh U. A History of Ancient and Early Mediveal India, Pearson 2009.
6. Bjagat RB. Component of urban Growth in India with referenc to Haryana: Findings from Recent Census, Nagarlok 1992;25(3):10-14.

7. Kundu, Amitabh *et al*. Hnadbook of Urbanization, Oxford University Press, New Delhi.
   - Emerging Trends of Urbanization in India, Occasional Paper No. 1 of 1993, Registrar General of India, New Delhi.
   - www.preservearticles.com/20 1 1 03254727/problems-of-urbanization-in-india.html
   - Wikipedia.org,urbanization in india
   - Urbanization: Facts and Figures. www.unhabitat.org